21 समाज विज्ञान में स्कूली शिक्षा का मूल्यांकन : हमारे अनुभव, प्रयोग और सबक

रश्मि पालीवाल



सन् 1986 से 2002 तक मप्र के 8 शासकीय माध्यमिक स्कूलों में एकलव्य ने समाज विज्ञान विषय के शिक्षण को सुधारने के लिए एक प्रयोग शुरू किया। राज्य के पाठ्यक्रम को देखते हुए नई पाठ्यपुस्तकें लिखीं और शासकीय शिक्षकों की मदद से उन्हें बच्चों के बीच उपयोग करके देखा। शिक्षकों के साथ ही एक मूलभूत संवाद इस बात पर किया गया कि समाज विज्ञान का स्वरूप क्या है और इसके शिक्षण से छात्रों में किन उपलब्धियों की अपेक्षा की जानी चाहिए। इसी के आगे बढ़कर यह भी सोचना जरूरी था कि अपेक्षित उपलब्धियों का मूल्यांकन कैसे किया जाना ठीक होगा। इस लेख में हम समाज विज्ञान में स्कूली शिक्षा के मूल्यांकन को लेकर हुए अनुभवों की चर्चा करेंगे।

स्कूल में समाज विज्ञान शिक्षा के उद्देश्य

इतिहास भूगोल बड़े बेवफा रात को रटे सुबह को सफा– जिस विषय की ऐसी बदनामी हो, उसकी पढ़ाई में सुधार करने की कोशिश हमने शुरू की। वर्तमान पाठ्य पुस्तकों की समीक्षा के दौरान हमने पाया था कि इनमें जानकारी को बहुत ही सरसरी तौर पर प्रस्तुत किया जाता है। शायद इसके पीछे धारणा यह है कि बच्चों के लिए संक्षिप्त जानकारी ही उपयुक्त है, और विस्तार केवल ऊँची कक्षाओं में उचित है।

अमेरिकी विचारक, जौन डीवी इस का मुद्दे खुलासा इन शब्दों में करते हैं– *जैसे कि माना गया था कि मस्तिष्क को अनुभूतियाँ बाहरी दुनिया से सीधे सम्पर्क से मिलती हैं,उसी तरह सोचा गया कि बच्चे के मस्तिष्क को बाहरी तथ्यों के सम्पर्क में लाने से शिक्षा सम्बन्धी सभी आवश्यकताएँ पूरी हो सकती हैं। इन तथ्यों को भूगोल,अंक गणित,व्याकरण आदि लेबल लगाए गए। इस बात को नजरअन्दाज कर दिया गया कि ये सभी तथ्य अतीत के सामाजिक जीवन से लिए गए हैं .....ये सामाजिक आवश्यकताओं के जवाब का प्रतिनिधित्व करते हैं।.......इस बात को भुला दिया गया कि बच्चे के जीवन को तभी पूरी तरह सार्थक बनाया जा सकता है जब किसी बाहरी अध्ययन के तौर पर नहीं, बल्कि सामाजिक जीवन के सन्दर्भ में पढ़ाई कराई जाए। (द स्कूल एण्ड सोसायटी, आकार पब्लिसर्स ,2008, पेज 80–81)*

यह कैसे किया जा सकता है– इस विषय में डीवी अमेरिकन इतिहास के शिक्षण का एक उदाहरण पेश करते हुए लिखते हैं– *इस पद्धति में विस्तृत ब्यौरा दिया गया है। परिवेश,औजारों, पहनावे,घरेलू बर्तनों,खाने,दैनिक रहन–सहन आदि का विस्तृत ब्यौरा। ताकि बच्चा इस सामग्री का पुनर्सृजन जीवन के रूप में करे न केवल ऐतिहासिक जानकारी के रूप में। इस तरह सामाजिक प्रक्रियाएँ व परिणाम वास्तविकता बन जाते हैं। इससे बच्चे की पढ़ी गई पूर्व अवधि के सामाजिक जीवन से नाटकीय व व्यक्तिगत एकात्मता स्थापित होती है। बच्चा खुद को सामना करने वाली समस्याओं की स्थिति में रखता है और उनके समाधान के तरीके खोजता है।* (वही, पेज 87)

हमारा भी मानना था कि बाहरी तथ्यों के रूप में जो बाँटा जाता है वह ज्ञान नहीं बन पाता। संक्षिप्त प्रस्तुतिकरण से बच्चे न समझ पाते हैं, न सीख पाते हैं: केवल रट पाते हैं। अगर हम यह अपेक्षा करते है कि शिक्षक छात्र को अवधारणाएँ समझाएँ तो पाठ्य पुस्तक को इसमें उनकी मदद करनी चाहिए। जब पाठ्य पुस्तकें ही सारांश के रूप में लिखी जाएँ तो उनके द्वारा अवधारणा समझकर आत्मसात करने की गुंजाइश नहीं रहती है। ऐसे में छात्रों के पास एक ही विकल्प बचता है– रट लेना या फिर और भी सरल कुंजियों की तलाश करना।

हमने स्कूली समाज विज्ञान के प्रमुख उद्देश्य ऐसे प्रस्तुत किए..

इतिहास

1. सामाजिक प्रक्रियाओं में निरन्तरता और बदलाव की खोज करना। समय के साथ क्या बदलाव हुए और कौन–सी बातें वैसी ही बनी रहीं – यह पहचानना।
2. समाज की अलग–अलग प्रक्रियाओं का एक–दूसरे से सम्बन्ध खोजना, उनके कारण खोजना।
3. आज के हमारे जीवन पर बीते हुए समय की प्रक्रियाओं की छाप व असर पहचानना।
4. समाज में व्यक्ति की भूमिका को उसके समय की सम्पूर्ण परिस्थिति के सन्दर्भ में समझना।
5. यह समझना कि बीते समय की जानकारी किस तरह के स्रोतों से, किन तरीकों से प्राप्त की जाती है।
6. बीते समय की बातों के बारे में अपना सन्तुलित मत बनाना।

नागरिक शास्त्र

1. बच्चों में शासन–प्रशासन और अर्थव्यवस्था के ढाँचों की कुछ

मूलभूत अवधारणाओं की समझ विकसित करना।

2. ये ढाँचे कैसे काम करते हैं – इसकी ठोस छवि बनाना।
3. इनके नियमों की अपने आसपास की वास्तविकता के साथ तुलना करते हुए उनके काम करने की खूबियों व कमियों को पहचानना।
4. इनके काम करने के ढंग पर किन बातों का प्रभाव पड़ता है और वे किन बातों को प्रभावित करते हैं – यह समझ बनाना।
5. शासन की आर्थिक नीतियों की पृष्ठभूमि और उनका असर व विकल्प समझना।
6. नागरिक की सक्रिय व प्रबुद्ध भूमिका के प्रति सचेत होना।

भूगोल

1. दुनिया के अलग–अलग क्षेत्रों के लोगों के जीवन के बारे में ठोस छवियों को बनाना।
2. धरती पर मनुष्य और प्रकृति के सम्बन्धों को समझना व अलग –अलग क्षेत्रों में पाई जाने वाली भिन्नताओं के कारणों को समझना।
3. प्रादेशिक भूगोल के ठोस सन्दर्भों से भौतिक भूगोल के बुनियादी तत्वों को जानना।
4. स्थानीय भूगोल के पहलुओं की जाँच–पड़ताल करना।
5. समय के साथ मानव व प्रकृति के अन्तर्सम्बन्धों में आने वाले बदलावों को समझना।
6. अवलोकन व अध्ययन की भौगोलिक पद्धतियों को विकसित करना जैसे मानचित्र बनाना व उपयोग करना, रेखाचित्र, चित्र, छायाचित्र, तालिकाओं का उपयोग आदि।

किताब का स्वरूप

इन उद्देश्यों को लेकर लिखी जाने वाली पुस्तक कैसी होनी चाहिए और उसमें किन–किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए? पाठ्यक्रम का चुनाव करने में इतिहास–भूगोल आदि में ''इतना–इतना तो पढ़ाना ही है''– ऐसी किसी बाध्यता को मानने की बजाए समाज के बारे में सार्थक सोच समझ को बढ़ावा देने के उद्देश्य से विषयों का चयन किया गया। हमने कोशिश की कि यथासम्भव आम बोलचाल की भाषा में ही पाठ हों। बच्चे आम तौर से अमूर्त पारिभाषिक चिन्तन नहीं कर पाते हैं – वे स्थिति विशेष के सापेक्ष ही चिन्तन करते हैं। इस कारण अवधारणाओं को उभारने के लिए ठोस स्थितियों का विस्तृत विवरण जरूरी था। उदाहरण के लिए हमने अलग–अलग तरह के औद्योगिक संगठनों के बारे में बताया – कुटीर उद्योग, दादन प्रथा, छोटा कारखाना आदि। इसे हम परिभाषाओं के द्वारा भी बता सकते हैं कि 'फलां–फलां क्रिया को कुटीर उद्योग कहते हैं' लेकिन हमने ऐसा न करके हरेक का एक उदाहरण लेकर, उसकी पूरी प्रक्रिया का विस्तार से वर्णन किया है। फिर इनकी आपसी तुलना के द्वारा सामान्य निष्कर्ष और अवधारणाओं को उभारा है। हमने कहानियों का विशेष उपयोग किया है – इतिहास, भूगोल और नागरिक शास्त्र तीनों में। कहानियाँ बच्चों के लिए आकर्षक हैं और इनसे पाठ्य पुस्तक की सरलता बढ़ती है। लेकिन इनका एक शैक्षणिक मकसद भी है। कहानियों से किसी भी चीज की एक ठोस छवि बनती है, जिससे सामान्य बातों को उभारना आसान हो जाता है। पर बच्चे कहानी में ही न खो जाएँ, बल्कि उसमें निहित सामान्य बातों को पकड़ पाएँ इसके लिए हमने कहानी के प्रवाह को बीच–बीच में रोक कर सामान्य बातों पर ध्यान खींचा है, प्रश्न पूछकर बच्चों को सोचने के लिए प्रेरित किया है। हमारा अनुभव रहा है कि यह तरीका काफी कारगर है और बच्चों और शिक्षकों से उत्साहजनक प्रतिक्रिया मिली है। हमने पुस्तक में चित्रों–मानचित्रों का सार्थक उपयोग करने की कोशिश की है। इसके लिए पाठ के बीच में उनसे सम्बन्धित प्रश्न पूछकर उनका विशेष अध्ययन भी करवाया है।

सामाजिक अध्ययन में गतिविधि क्या हो?

शिक्षा शास्त्र में यह एक सर्वमान्य सिद्धान्त है कि अवधारणाओं को सिखाने के लिए गतिविधि एक प्रमुख साधन है। हमने काफी प्रयत्नों के बाद, सामाजिक अध्ययन में तीन मुख्य गतिविधियों को पहचाना जो सहज रूप से कक्षा में करवाई जा सकती हैं –

1. बीच–बीच में प्रश्न :

आमतौर पर कक्षा में 'तू–पढ़' पद्धति से काम किया जाता है। हमने पाठों के बीच–बीच में प्रश्न डाले हैं – पाठ्य पुस्तक में बीच–बीच में आने वाले ये प्रश्न कई तरह के हैं । काफी सारे तो केवल 'कॉम्प्रिहेंशन' के हैं व कठिन शब्द व भाषा के अर्थ से सम्बन्धित हैं। कुछ प्रश्न चित्रों, नक्शों व तालिकाओं से जानकारी हासिल करने के हैं। और कई सारे अवधारणात्मक प्रश्न हैं जिनमें बच्चों को चर्चा करके उत्तर खोजना है। कई प्रश्न तुलना के हैं–दो अलग–अलग समय के बीच तुलना करके बदलाव को पहचानना या अलग–अलग स्थितियों में फर्क पहचानना। पाठ के बीच–बीच में आए इन प्रश्नों को हल करते हुए बच्चे सामग्री पर गौर करते हैं और ग्रहण भी करते हैं। शिक्षक और छात्रों के बीच चर्चा हो पाती है।

2. बच्चों के अनुभव व जानकारी का उपयोग :

10–15 साल के बच्चों के पास अपने समाज के अवलोकन से प्राप्त ज्ञान और समझ का बड़ा भण्डार रहता है। आमतौर पर सामाजिक

अध्ययन के शिक्षण में इस भण्डार का कोई उपयोग नहीं होता है। मगर उसका उपयोग शिक्षण की एक बहुत ही कारगर विधि बन सकता है। हमारी पुस्तकों में बीच–बीच के सवालों में कई ऐसे हैं जो बच्चों की जानकारी व अनुभवों को उभारते हैं व पाठ की विषय वस्तु से जोड़ते हैं।

3. पुस्तक के उपयोग का अभ्यास :

सामाजिक अध्ययन में लिखित माध्यम से समझने और अभिव्यक्त करने की कुशलता का महत्व सर्वोपरि है। क्योंकि दूसरे समाजों,समयों,स्थानों,संगठनों,संस्कृतियों का अनुभव सिर्फ प्रत्यक्ष तौर पर हासिल नहीं किया जा सकता। इसे सुन–समझकर और पढ़ समझकर हासिल करना होता है। अतः पठन सामग्री की मुख्य बातें बताना, संक्षेप में कहना, पढ़े हुए अंश का विषय समझना, अपने शब्दों में वही बात कहना, किसी विषय से सम्बन्धित जानकारी पाठ के किस उपशीर्षक के तहत मिलेगी यह समझना – ऐसी कुशलताएँ हैं जिनके अभ्यास से ही छात्रों को सामाजिक अध्ययन में सक्षम बनाया जा सकता है। हमने पाठों में इन कुशलताओं का अभ्यास करवाने की कोशिश की है।

परीक्षा में भी इन कुशलताओं को विशेष महत्व दिया है। इसी परिप्रेक्ष्य में हमने खुली पुस्तक परीक्षा को अपनाया क्योंकि हम छात्रों की रटने की क्षमता के बजाय सोचने, समझने और किताब का बुद्धिमत्ता से उपयोग कर पाने की क्षमता के मूल्यांकन को सबसे अधिक महत्व देना चाहते थे।

छात्रों का मूल्यांकन–खुली पुस्तक मूल्यांकन विधि

सामाजिक अध्ययन में मूल्यांकन की यह विधि महत्वपूर्ण है क्योंकि इस बात का मूल्यांकन करना निरर्थक है कि बच्चों को विषय की कितनी जानकारियाँ कंठस्थ हैं। जानकारियों का कोई अन्त नहीं है। किसी भी पाठ्यक्रम में सारी जानकारी नहीं दी जा सकती और बहुत सारी जानकारी याद रखना सम्भव भी नहीं। कुछ समय के लिए याद रख भी लिया जाए तो यह निश्चित है कि कुछ समय बाद वो जानकारियाँ भुला दी जाएँगी। तो क्या जानकारियों के भूल जाने पर शिक्षा की कोई छाप व्यक्ति के व्यक्तित्व में नहीं रहेगी? क्या शिक्षा से ऐसी सोच, समझ और कुशलता हमारे साथ नहीं रहनी चाहिए, जो आजीवन काम आए, जो नई–नई परिस्थितियों,नई–नई पुस्तकों व सामग्रियों, नई–नई समस्याओं के बीच हमारे काम आए?

शिक्षिका और मनोवैज्ञानिक कमला मुकुन्दा, अपनी पुस्तक,व्हाट डिड यू आस्क ऐट स्कूल टुडे (2009,पेज 68) में अमेरिका में किए गए एक रोचक अध्ययन का उल्लेख करती हैं। हैरी बाहरिक और उनके साथियों ने यह जानने की कोशिश की कि हाईस्कूल में पढ़ी गई कौन–सी बातें 50 साल के बाद भी लोगों को याद रहती हैं। उन्होंने पाया कि जो बातें एक लम्बी अवधि के दौरान सीखी गईं तथा बार–बार उपयोग में आती रहीं, वे 50 साल बाद भी याद रहीं। वहीं, छोटी अवधि में, संक्षेप में सीखी गई बातें, जिनका बाद में ज्यादा उपयोग भी न हुआ हो, भुला दी गईं। कमला मुकुन्दा इस ओर हमारा ध्यान दिलाती हैं कि हम स्कूल में पढ़ना, लिखना, समझना, हिसाब लगाना, समस्या का समाधान करना, विश्लेषण करना, निष्कर्ष निकालना सीखते हैं तो इन कुशलताओं को जीवन पर्यन्त नहीं भूलते–बशर्ते कि स्कूल में इन पर ध्यान दिया जाए।

हमने पुस्तक के उपयोग को, सोचने, समझने व अभिव्यक्त करने की कुशलता को मूल्यांकन के लायक माना और परीक्षा में पुस्तक की छूट दी। ये सामान्य कुशलताएँ हैं – पर ये कुशलताएँ सामाजिक अध्ययन के लिए भी महत्वपूर्ण हैं। इनके अलावा विभिन्न समयों या स्थानों के बीच तुलना करना, कारण समझाना, स्थितियों व प्रक्रियाओं का विस्तृत वर्णन करना या सार व्यक्त करना, विश्लेषण करना आदि – विशिष्ट रूप से सामाजिक अध्ययन के मूल्यांकन के बिन्दु हैं। इस तरह मूल्यांकन की दिशा बदलने से हम बच्चों के ऊपर से रटने, भूलने और परीक्षा देने के आतंक को भी खत्म करना चाहते थे। व्यावहारिक तौर पर इसका एक लाभ यह भी हुआ कि नक्शों, चित्रों, रेखाचित्रों आदि पर जो सवाल बनाए गए उनके लिए नक्शों आदि को प्रश्नपत्र में छाप देने की जरूरत नहीं रही–किताब में दिए नक्शों आदि पर ही नए सवाल परीक्षा में पूछे जा सकते थे।

छात्रों का मूल्यांकन करने के लिए निम्न मुद्दों पर प्रश्न बनाए जाते थे–

1. पुस्तक से आवश्यक जानकारी ढूँढ पाने की क्षमता।
2. प्रश्न का उद्देश्य समझ कर सटीक उत्तर लिख पाने की क्षमता।
.3. किसी मुद्दे पर पाठों में की गई चर्चा का सार व्यक्त कर पाने की क्षमता।
4. पाठ में चर्चित मुद्दों के आधार पर किसी नई जानकारी या परिस्थिति से सम्बन्धित खुला विश्लेषण कर पाने की क्षमता।
5. नक्शों, चित्रों, तालिकाओं व रेखाचित्रों के आधार पर जानकारी हासिल करने की क्षमता।
6. अलग–अलग स्थितियों के बीच तुलना करने की क्षमता।
7. किसी परिस्थिति का कारण समझा पाने की क्षमता।

प्रश्नों के प्रकार क्या थे?

1. वस्तुनिष्ठ प्रश्न–जैसे एक शब्द या वाक्य में उत्तर दो, खाली स्थान भरो। वस्तुनिष्ठ प्रश्नों पर 100 में से 16 अंक रखे जाते थे।

2. ऐसे प्रश्न जिनका उत्तर पुस्तक के एक अंश में पूरी तरह मिल जाएगा। ऐसे सटीक प्रश्नों पर 100 में से 30 अंक रखे जाते थे।
3. ऐसे प्रश्न जिनका उत्तर पाठ या पुस्तक के एक से अधिक अंश में से निकालना होगा या ऐसे प्रश्न जिनका उत्तर पाठ में कहीं लिखा नहीं मिलेगा, पर चित्र, नक्शा आदि की सहायता से या अपने तर्क, अनुमान, कल्पना, जानकारी व अनुभव की सहायता से देना होगा। सार, तुलना, विश्लेषण, तर्क, नक्शा, चित्र, तालिका, अनुमान आदि कुशलताओं पर आधारित प्रश्नों पर 100 में से 54 अंक रखे जाते थे।

मूल्यांकन की नीति : कुछ बातें

1. पुस्तक में दिए गए प्रश्न परीक्षा में एक से अधिक संख्या में नहीं रखे जाते थे हर बार नए प्रश्न बनाने का प्रयास होता था।
2. जो छात्र अपने शब्दों में उत्तर दे, चाहे भाषा टूटी फूटी क्यों न हो, उसे अतिरिक्त अंक दिए जाते थे।
3. पुस्तक से उतारे गए सही उत्तर में यदि पुस्तक के अंश की आगे–पीछे की अनावश्यक बातें भी उतारी हों तो अंक काटे जाते थे।

प्रश्नों के नमूने

1. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

नीचे दिए केवल गलत वाक्यों को सुधार कर लिखो:

1. बचत खाते में जमा पैसों पर बैंक ब्याज नहीं देते हैं।
2. क्रॉस चेक देने पर बैंक ब्याज नहीं देते हैं।
3. बचत खाते से रोजाना पैसे निकाले जा सकते हैं।
4. बैंक से केवल बड़े कारखानों के मालिक ही ऋण ले सकते हैं।
5. मियादी खाते में ज्यादा ब्याज मिलता है।

खाली स्थान भरो:

1. ———————— को अपने साथ करने के लिए अकबर ने ————————में यात्रा कर और 1564 में ———————— हटाया।
2. अकबर के शासन की शुरुआत में उसके राज्य में केवल———————— और —————————— अमीर थे।
3. 1580 के बाद अकबर ने ———————— की नीति अपनाई।
4. मुगल मनसबदारों की नियुक्ति ———————— करता था।
5. औरंगजेब के शासनकाल में अमीरों को देने के लिए ———————— की कमी पड़ने लगी।
6. शिवाजी ने ————————— राज्य के लोगों से —————————नामक लगान वसूल किया।

2. सटीक (उत्तर वाले) प्रश्न

1. इंग्लैण्ड में जब पहले संसद बनी तो कौन–कौन लोग वोट डाल सकते थे और कौन नहीं।
2. अंग्रेज काल में वन विभाग ने जंगल बचाने के लिए लोगों पर क्या–क्या रोक लगाई?

3. सार,तुलना,तर्क,अनुमान,चित्र,नक्शा आदि पर प्रश्न

1. भारत में आज वोट डालने के नियमों और इंग्लैण्ड की पहली संसद के नियमों में क्या अन्तर है?
2. भारत के कानून कौन बनाता है? कानून किस प्रकार बनते हैं? वर्णन करो।
3. पृष्ठ 101 पर बने चित्र का वर्णन करो। चित्र में क्या–क्या दिख रहा है? ये चीजें कहाँ से ले जाई जा रही हैं? इस चित्र में जो लोग दिख रहे हैं, वे कौन हैं? क्या कह रहे हैं? क्या वे एक दूसरे की बात मान रहे हैं?
4. अमेरिका के आदिवासी और यूरोपीय दोनों ही बाइसनों का शिकार करते थे, किन्तु उनके द्वारा बाइसन के उपयोग में बहुत अन्तर था। यह अन्तर क्या था, समझाओ।
5. पुस्तक के पृष्ठ 220 का मानचित्र देखकर इन प्रश्नों के उत्तर लिखो–
   - क. कोलम्बिया नदी किस दिशा में बहती है, किस सागर में गिरती है?
   - ख. मेकेंजी नदी किस दिशा में बहती है, किस सागर में गिरती है?
   - ग. कौन–सी नदी भूमध्यरेखा से ज्यादा दूर है– मेकेंजी या रेड नदी?
   - घ. जाड़े के मौसम में किस नदी का पानी बर्फ बन जाता होगा– मैकेंजी का या रेड का?
   - ड. इनमें से कौन–सी जगह समुद्र किनारे हैं– डेन्वर, विन्निपेग, नारफोक, सेन फ्रानसिस्को?
6. यहाँ तीन जगहों का जाड़े और गर्मी का तापमान दिया गया है। हर जगह के बारे में कारण सहित समझाओ कि वहाँ की जलवायु को तुम सम जलवायु कहोगे या विषम?

जगह	जनवरी का तापमान	मई का तापमान
क	15	30
ख	25	30
ग	26	28

7. अमेरिका के फार्मों के मालिक सैकड़ों एकड़ में एक ही फसल बोते हैं।

क. यह बात पृष्ठ 247 के चित्र में किस तरह दिखाई दे रही है?

ख. सैंकड़ों एकड़ में एक ही फसल बोने में क्या फायदा है?

शिक्षक प्रशिक्षण

आठ शासकीय शालाओं में 16 शिक्षकों के साथ हर साल ये प्रश्नपत्र बनाए जाते थे। परीक्षा हो जाने के बाद दुबारा शिक्षकों के साथ मिला जाता और बच्चों की उत्तर पुस्तिकाओं को पढ़कर समझा जाता कि मूल्यांकन करने का हमारा प्रयास कितना सार्थक हो पाया है। प्रश्नपत्र की समीक्षा करने के बाद मूल्यांकन के मापदण्ड बनाए जाते और कॉपियाँ जाँची जातीं। साल में दो बार होने वाली इन कवायदों में हमने मूल्यांकन के उद्देश्यों और तौर–तरीकों पर अपनी समझ का विकास किया।

पुस्तक के उपयोग की कुशलता और उसका ज्ञान

हमने देखा कि बच्चों ने किताब के इस्तेमाल के लिए तरह–तरह की कोशिशें कीं। कुछ बच्चे प्रश्न के उत्तर को अपने मन में बनी समझ के आधार पर अपने शब्दों में लिख देते, कुछ बच्चे यह न करके किताब में ही उत्तर खोजने की कोशिश करते। यह देखकर हमें बहुत अफसोस होता कि बच्चे किताब सामने होने के बावजूद, सोच–समझकर नहीं पर एक बेतरतीब ढंग से किताब को उलटते–पुलटते हुए कई मिनटों तक बैठे हैं। किताब में खोजने में भी बच्चों की कुशलताएँ अलग–अलग थीं। कुछ बच्चे साफ तौर पर उस अंश को ही किताब में से उतारते जो उत्तर के लिए उपयुक्त था, कई बच्चे उपयुक्त अंश को अधूरा उतारते, अन्य कई बच्चे उपयुक्त अंश के अलावा आगे या पीछे के भी कई वाक्य उतारकर लिख देते और बहुत से बच्चे तो किताब में उपयुक्त अंश तक पहुँच भी नहीं पाते व कोई भी असम्बद्ध अंश उतारकर लिख देते थे।

हमने शिक्षकों के साथ बच्चों के उत्तरों का अध्ययन किया–ताकि हम जान पाएँ कि बच्चे किस प्रकार सोच रहे थे और हम उन्हें दिशा देने के लिए क्या करें। यह बात अपने आप में मूलभूत महत्व रखती है– कि हमारे लिए मूल्यांकन का उद्देश्य बच्चों की जानकारी व समझ को अंक देना होने के अलावा यह ज्यादा था कि उनके बारे में हमारी जानकारी व समझ बढ़ पाए। खुली पुस्तक प्रणाली के अनुभवों का अध्ययन करके शिक्षक इस बात का विशेष प्रयास करने लगे कि वे बच्चों को पाठ की मुख्य बातों का ध्यान दिलाएँ, मुख्य अंशों की व उनको दर्शाने वाले उपशीर्षकों की पहचान करवाएँ,समझकर पढ़ने व सोचकर अपने शब्दों में लिखने के लिए प्रोत्साहित करें। बच्चों को इस ओर भी सचेत करने की जरूरत थी कि वे पाठ्य सामग्री का अध्ययन करके परीक्षा दें–यह न सोचते रहें कि किताब तो होगी–परीक्षा कक्ष में ही उत्तर खोज लेंगे।

हमने भी इस उद्देश्य से कुछ विशेष प्रयास किए–जैसे एक वर्कबुक और प्रश्न बैंक बनाने की कोशिश की। वर्कबुक में बच्चों को एक प्रश्न के बच्चों द्वारा ही लिखे गए कई उत्तर दिए और उनकी समीक्षा करने का तरीका बताया। बच्चों से कहा कि वे उन उत्तरों को जाँच कर 10 में से कितने अंक देंगे, व क्यों यह लिखें।

इस तरह किताब को कंठस्थ करने (कुछ समय के लिए) की बजाय किताब को जानकारी के स्रोत के रूप में इस्तेमाल करना सिखाने के लिए शिक्षक व हम प्रतिबद्ध थे और अपनी तरह से कोशिशें करते रहे। बच्चों के लिए काम आसान व सीखना निरर्थक बनाने के बजाय खुली पुस्तक प्रणाली ने बच्चों व शिक्षकों को महत्वपूर्ण नई कुशलताएँ सीखने–सिखाने का मौका दिया। परन्तु क्या बच्चों को समाज विज्ञान के ज्ञान के विकास का अवसर भी मिलता था, हम कुछ विस्तार में इस मुद्दे को आगे समझेंगे।

समाज विज्ञान का नजरिया और उसका ज्ञान

जैसा हमने आरम्भ में प्रस्तुत किया,इतिहास या भूगोल के नजरिए का ज्ञान बच्चे विकसित कर रहे हैं, हम इसका मूल्यांकन करना चाहते थे। इस ज्ञान के क्या लक्षण हो सकते थे। उदाहरण के लिए दो अलग समयों या स्थानों की परिस्थितियों के अन्तर के बारे में विचार करना व उस विचार को व्यक्त कर पाना इस ज्ञान के निमार्ण का एक लक्षण माना जा सकता है।

हम यहाँ दो प्रश्नों के उदाहरण से देखेंगे कि बच्चों में यह ज्ञान कैसे परिलक्षित होता है?

प्रश्न 1: अंग्रेजों से पहले लोग जंगल का उपयोग कैसे करते थे। और अंग्रेजों के शासन में लोग जंगल का उपयोग कैसे करते थे? तुलना करो और अपने शब्दों में लिखो।

उत्तर 1: अंग्रेजों ने पहले जंगल का उपयोग आदिमियो से करवाता था और फिर उन्होंने खेती भी और वे अंग्रेजों आदमियों को मारते और व्यापारियों को खुश कर देते थे। यहां से दूर गाँव में लगान लेने के लिए भेजा जाता था।

(छात्र के अपने वाक्य,छवियाँ व निष्कर्ष हैं।)

उत्तर 2: अंग्रेजों से पहले लोग जंगल का उपयोग बड़े अच्छे ढंग से करते थे। पूरे पेड़ को नही काटा जाता था। पेड़ से सारी पत्तियों नहीं ली जाती थी। और पत्ते की कटाई अंधाधुंद नही की जाती थी वन सुरक्षित थे अंग्रेजों के समय रेल की शिल्पर के लिए बहुत अधिक पेड़ कटे। इस प्रकार आदिवासी जंगल में लकड़ी न लाकर जड़ी–बूटियां वाला फूल आदि लाते थे और अंग्रेजों ने वन ही समाप्त कर दिए।

(छात्र के अपने वाक्य,छवियाँ व निष्कर्ष हैं।)

उत्तर 3: अंग्रेजों से पहले

केवल गाँव या जंगल के पास के लोग

कंद मूल फल और जड़ी–बूटी और जानवर चराने के लिए अपनी जरूरतों के लिए लकड़ी व्यापार और

विकास की कटाई के लिए

अंग्रेजों के समय

शहरों में मकान बनाना

रेल लाईन बिछाना

दवाईयों का निर्माण कर लाभ कमाना

(छात्र के अपने वाक्य, व बिन्दुवार प्रस्तुति।)

चौथा 4: अंग्रजों से पहले वे एक तरह से जंगल के मालिक थे वे शिकार करते थे, कंद फल–फूल, जड़ी–बूटियाँ बटोरते थे, अपने ढोर चराते थे। कही–कही तो जंगल जलाकर खेती भी करते थे। वे अपने घर से दूसरी चीजें बनाने के लिए जंगल से लकड़ी काट लाते थे। अंग्रेजों के समय में जंगल की लकड़ी का व्यापार होने लगा। उस समय कलकत्ता, बंबई जैसे बड़े–बड़े शहर बस रहे थे एवं बड़ी–बड़ी रेल लाईन बिछा रही थी बड़े–बड़े जहाज बन रहे थे और खदानें खुल रही थी। इन सबको लिए लकड़ी जरूरी थी। इसलिए अंग्रेजों ने जंगल नष्ट कर डाले।

(किताब से सोच–समझकर चुने गए वाक्यों को समेटकर लिख गया उत्तर)

उत्तर 5: अंग्रेजों से पहले लोग जंगल का उपयोग बहुत सरलता से करते थे और अंग्रेजों के शासन में जंगल का उपयोग बहुत कठिनाई से करते थे। और अंग्रेजों किसानों पर बहुत जुल्म करते थे और अंग्रेजों के शासन में जंगल का उपयोग पूरी तरह से नहीं कर सकते हैं। यही तुलना अंग्रेजों से पहले के लोग की और अंग्रेजों के शासन की तुलना हमने अपने शब्दों में लिखा है।

(छात्र के अपने वाक्य,छवियाँ व निष्कर्ष)

उत्तर 6: अंग्रेजों से पहले लोग जंगल का उपयोग खुल्ले आम करते थे। वहाँ से फल लकड़ी खेती करना ये सब अपने मन से करते तथा अंग्रेजों के शासन में वे उसका उपयोग खुल्ले में नहीं कर पाते अगर वे लकड़ी लेने जाते थे तो उनको अंग्रेजों के आदमी रोकते और जंगल में लकड़ी काटने से मना कर दिया और वे खेती जो कहीं भी करते थे अगर वे खेती अंग्रेज बाँट कर देते और वहीं की जमीन उनके नाम लिख दी और यदी अगर वे फिर कहीं दूसरी जगह पर खेती करते तो वह उन्हें पकड़ ले जाते और उन्हें बन्द कर देते थे।

(छात्र के अपने वाक्य,छवियाँ व निष्कर्ष–पाठ में दी कहानी से निकाला गया विस्तृत सामान्य निष्कर्ष।)

अब देखते हैं एक और प्रश्न जिसके उत्तर की सीधे तौर पर कोई चर्चा किताब में लिखी हुई नहीं ।

प्रश्न 2: पूर्वी हिमालय की झूम खेती और अमेरिका के ग्रेट प्लेंस की खेती में क्या–क्या अन्तर है?

उत्तर 1: पूर्वी हिमालय कि झूम खेती और ग्रेट प्लेंस की खेती मे यह अन्तर है की झूम लोग पहले खेत में उगे पेड़ काटते हैं। फिर इस प्रदेश में कोई मजदूरी नही करता। हलकी वर्षा होते ही पुरूष महिला मिलकर ही करिणे में बीज ले कर कुदाले से मिट्टी में थोड़े से छेद बनाकर बीज डालकर मिट्टी दबा देते है। झूम खेतों में परिवार के उपयोग कि सारी फसलें एक ही खेत में बो दी जाती है ग्रेट प्लेंस में खेत में पेड़ नही हैं खेत मैदान जैसे हैं। ग्रेट प्लेंस में सारा काम मशीनों से होता है ग्रेट प्लेंस में मिलों तक एक ही फसल बोई जाती है।

(छात्र के अपने वाक्य,छवियाँ व निष्कर्ष)

उत्तर 2: पूर्वी हिमालय कि झूम खेती और ग्रेट प्लेंस खेती में यह अन्तर है कि पूर्वी हिमालय की झूम खेती लेकिन इस महीने में बारिश बहुत कम होती है। इन महीनों में यहाँ पर पानी की समस्या पैदा हो जाती है। बरसात का पानी गहरी घाटी में उतर कर वहाँ बहने वाली नदियों से लाना पड़ता है। और अमेरिका के ग्रेट प्लेंस की खेती में ग्रेट प्लेंस में चर रहे जानवर खेतों में घुसकर फसल बर्बाद कर देते है। खेतों को बचाने के लिए बाड़ा

बनाना जरूरी था। लेकिन बाग किससे बनाएं ग्रेट प्लेंस मे बड़े–बड़े जोत वाले किसान बने। आजकल यहाँ एक किसानों के पास 500–600 एकड़ जमीन होना आम बात है। यह अन्तर है।

(किताबों से उठाए गए असम्बद्ध वाक्यों से बना उत्तर)

उत्तर 3: पूर्वी हिमालय की झूम की खेती– अब झूम की खेती के लिए पर्याप्त जंगल नहीं हैं। कई लोगों का यह कहना है झूम कि खेती के कारण जंगल नष्ट हो रहे हैं। और यहाँ के लोग ढलानों पर सीढ़ीनुमा खेत बना रहे हैं। ग्रेट प्लेंस में विशेष रूप से गेहूँ उगाया जाता है। वह ठण्ड आने को होती है और वहाँ बसन्त ऋतु में गेहूँ बोया जाता है। झूम के खेत में इधर से उधर खेत बनाया जाता है। ग्रेट प्लेंस के खेत में अस्थाई रूप से खेत की जाती है। इससे ज्यादा जंगल नष्ट नहीं हो रहे हैं।

(किताबों से उठाए गए असम्बद्ध वाक्यों से बना उत्तर)

उत्तर 4: झूम की खेती के लिए पर्याप्त जंगल नहीं हैं हरेक साल एक खेत को परती अब सिर्फ चार या पांच साल छोड़ पा रहे हैं। इस वजह से अब जमीन पर पेड़ बढ़ नहीं पाते और जंगल खराब होने लगे। तीन चार साल मे उस जमीन पर जिस से झूम की होती एक ही खेत में बोयी जाती है एक ही खेत में धान, मूली ज्वार तिल सेम बाजी तम्बाकू कपास कंद आदि मिला जुलकर बोया जाता है पकने पर काट लिया जाता है।

ग्रेटप्लेंस में विशेष रूप से गेहूँ उगाया जाता हे वहां मिलो धन गेहू के खेत देखे जा सकते है ग्रेटप्लेंस में दो तरह के गेहूँ उगाए जाते है शीत ऋतु का गेहूँ और बसन्त ऋतु के अलावा ग्रेटप्लेंस में सोयाबीन व कुछ कपास भी उगाया जाता है।

(शुरू के वाक्य असम्बद्ध हैं पर बाद के वाक्य सोच समझकर किताब से चुने गए हैं ताकि फसलों में अन्तर बता सके।)

उत्तर 5 : पूर्वी हिमालय में झूम खेती पेड़ काट कर पड़े रहने देते हैं ताकि वे सूख जाएँ और जब वे सूख जाते है तो उन्हें जला देते हैं जलाने के बाद जमीन पर राख ही राख बिछ जाती है नीचे से अधजले पेड़ ठूठ लहराते हैं एकाध बारिश के बाद राख मिट्टी में घुल जाती है। इस तरह झूम खेत तैयार हो जाता है जबकि अमेरिका के ग्रेट प्लेंस में खेती इस तरह नहीं कि जाती है वहां कटीले तारों का बड़ा बनाया जाता है फिर खेतों को बखराया जाता है फिर उनसे बीज बोये जाते हैं और समय–समय पर सिंचाई कि जाती है और वहाँ मशीनों के द्वारा काटी जाती है जबकि झूम खेती में ऐसा नही होता है वहाँ फसल की कटाई हाथों के द्वारा की जाती है। वहाँ पानी सिर्फ बारिश में दिया जाता तथा अमेरिका के ग्रेट प्लेंस में ऐसा नही होता है वहाँ समय समय पर पानी दिया जाता है।

(छात्र के अपने वाक्य,छवियाँ व निष्कर्ष)

इन प्रश्नों के उत्तर किताब में एक साथ नहीं मिलते। बच्चों को स्वयं जमीन या जंगल के दो सर्वथा भिन्न उपयोगों की धारणा बनानी व लिखनी होती है। किताब से वे उत्तर के एक पक्ष की जानकारी उतार सकते हैं पर दूसरे पक्ष से उसे जोड़कर प्रस्तुत उन्हें स्वयं करना होगा। उपरोक्त काम कर पाना बच्चों को समय व स्थान के अन्तर के ज्ञान को बनाने का मौका देता था– पर इस में जो ज्ञान निहित है,क्या उसी तक ज्ञान की परिभाषा जाती है। ज्ञान सिर्फ किसी क्रिया को कर सकना नहीं माना जाता, अपितु, किसी संस्कृति में सत्य का दावा करने वाली बातों को जानना व उन्हें अपने पूर्वज्ञान से जोड़कर उस समझ को संशोधित करना भी ज्ञान का अर्जन है। हमने ऊपर दिए उदाहरणों में कई बच्चों को अपने मन में निर्मित छवियों, साराशों, निष्कर्षों को अपने वाक्यों में प्रस्तुत करते पाया।

आप देखेंगे कि बच्चों ने यह काम अपनी अपनी तरह से किया है–उनकी प्रस्तुति में विविधता है जो उनके निजी संघर्ष की द्योतक है। किताब से ढूँढने की सुविधा उनका सहयोग करती है पर उनका काम सम्पन्न नहीं करती। दूसरी ओर बच्चों के लिए एक सही उत्तर याद रखने की अपेक्षा की बजाय अपने हिसाब से सही उत्तर सोचने, ढूंढने, लिखने की अपेक्षा तभी एक सच बन सकती है जब हम ज्ञान को संकलन की वस्तु न मानकर निमार्ण की वस्तु मानें–जिसे हर बच्चा स्वयं करता है।

यह मुद्दा शिक्षकों को परेशान करता रहता कि ज्ञान तो वह जो याद रहे–मौका आने पर तुरन्त मस्तिष्क में वह बात कौंध जाए–मौके पर व्यक्ति किताब को कहाँ ढूँढता फिरेगा। यह बात जब तब कोई कह देता और तब यह विचार करने लगते कि कौन–सी बातें हमें कब याद रहती हैं, और कौन–सी बातों को हम भूल जाते हैं। इस तरह पाठ्यक्रम व पाठ्यवस्तु हमारे लिए पत्थर की लकीर न रहकर विवेचना का विषय बन गई। यह चिन्ता का विषय था कि क्या बच्चे अपने मन में कुछ ज्ञान निर्मित कर रहे हैं या

मुख्य रूप से किताब से उचित अंश खोजने व लिखने की कुशलता हासिल कर रहे हैं।

इसका कुछ उत्तर हमें एक और छोटे से अध्ययन से मिला जिसे एक स्कूल में कक्षा 6,7 व 8 के बच्चों के साथ किया गया।

एक स्कूल में हमने इन बच्चों को एक प्रश्नपत्र दिया और कहा कि इसका उत्तर किताब के बिना देना है। जो याद है, जो समझे हो,लिख दो। एक सप्ताह बाद वही प्रश्नपत्र उन्हीं बच्चों को फिर दिया और कहा कि इसे हल करने में वे किताब का उपयोग कर सकते हैं। इन दोनों प्रकार के उत्तरों की तुलना करने पर यह सामने आया कि खुली पुस्तक परीक्षा में ज्यादा बच्चे सफल हुए थे। दूसरी बात यह कि बच्चे ऐसे प्रश्नों के उत्तर लिखने में दोनों बार ज्यादा असफल रहे जो उन पाठों से थे जिनमें विस्तार व उदाहरण,कहानी आदि नहीं थीं–यानी जो संक्षिप्त व गूढ़ शैली में लिखे हुए थे।

इससे यह इंगित हो रहा था कि संक्षिप्त व गूढ़ पाठों की बातें याद नहीं रहतीं–और, किताब में सामने उपलब्ध होने पर भी उन्हें ढूँढना व समझना मुश्किल होता है। इसका उल्टा असर उन पाठों का दिखाई दिया जो ज्यादा प्रभावपूर्ण शैली में लिखे गए थे–उनसे सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर ज्यादा बच्चों ने अपनी समझ के आधार पर, अपने शब्दों में दिए और पुस्तक के होते हुए भी उसमें से अंश उतारने की कोशिश नहीं की। इस अनुभव से यह इंगित हो रहा था कि अगर पाठ प्रभावी है, (जिससे उसके शिक्षक द्वारा प्रभावी तरीके से उपयोग किए जाने की सम्भावना भी बढ़ जाती है) तो बच्चे कुछ ज्ञान का निमार्ण करने लगते हैं और ऐसे में चीजें याद रखने का काम एक अलग व बोझिल काम नहीं रहता। ऐसे में, बहुत फर्क नहीं पड़ता कि पुस्तक पास में है या नहीं।

इस तरह यह सवाल यह है कि ज्ञान बाँटने वाली पुस्तक ही ज्ञान को कैसे देखती है। अब स्कूली ज्ञान का स्वरूप आलोचना केन्द्र में है। अब सीखने के सिद्धान्तों में हो रहे विकास के चलते यह समझा जा रहा है कि स्कूल में तथ्यों को असम्बद्ध रूप में अलग–अलग अपने आप में महत्वपूर्ण जानकारी के टुकड़ों के तौर पर सिखाया जाता है–जबकि सीखने वाले ने उस वक्त तक दुनिया के बारे में जो मानसिक अवधारणाएँ बना ली हैं, वे अवधारणाएँ जानकारियों के उन टुकड़ों के साथ जुड़कर कोई सार्थक किय्रा कर नहीं पातीं। इसलिए सीखने वाले की अवधारणाओं में कोई बुनियादी बदलाव हो नहीं पाता। वहीं, जिस हद तक भी यह बदलाव होना शुरू हो, इसमें बच्चे–बच्चे के बीच भिन्नता होना अवश्यंभावी है। प्रत्येक बच्चा अपनी बनाई धारणाओं को अपने तरीके से बदलने की कोशिश करता है। पर स्कूल में ज्ञान को न तो आपस के जीवन्त सम्बन्धों के साथ पेश किया जाता है और न ही सीखने वाले की कोशिशों को सिखाने में और मूल्यांकन करने में स्थान दिया जाता है। इस तरह ज्ञान के बनने और याद रखे जाने की स्थितियाँ ही स्कूल में नहीं पैदा हो पातीं।

ज्ञान, बच्चे और शिक्षकीय पेशा

अपनी तरह से सोचने,समझने और व्यक्त करने की छूट हमारे कार्यक्रम में बच्चों को दी जा सकी क्योंकि शिक्षक और हम हर बच्चे की सोच से जूझने को तैयार थे–पहले से तय मानकों के आधार पर बच्चों पर ठप्पे लगाने का उद्देश्य हमारा था ही नहीं– जैसे कारखानों में बने माल पर लगाए जाते हैं। हमने देखा कि कैसे शिक्षकों का समूह अपने पेशे की गरिमा रखते हुए, एक–दूसरे को जवाब देते हुए, उचित–अनुचित मूल्यांकन पर आपसी सहमति बनाते हुए यह काम कई सालों तक अनवरत करता रहा–कर पाया। यही सब होशंगाबाद विज्ञान कार्यक्रम के शिक्षक भी करते थे–30 साल तक करते रहे थे–पेशे की परम्पराएँ,नीतियाँ और प्रणालियाँ बनाते हुए। शिक्षक समूह का यह अस्तित्व भी मूल्यांकन सुधार के लिए एक अनिवार्य शर्त है।

दूसरी ओर यह भी जाहिर है कि शिक्षण कार्य को अधिक सार्थक बनाते रहने की जरूरत है–मूल्यांकन में सुधार के प्रयासों की सार्थकता उसी पर आधारित रहती है। बुरी किताब और बुरे शिक्षण के साथ खुली पुस्तक परीक्षा भी किसी की कोई मदद नहीं कर सकती। हाँ, अच्छी किताब और अच्छे शिक्षण के साथ खुली पुस्तक परीक्षा का अनुभव कुछ महत्वपूर्ण कुशलताओं को सीखने का मौका दे सकता है। ये कुशलताएँ अपने आप में मूल्यवान हैं और सत्य मानी गई बातों के ज्ञान के निमार्ण के साथ–साथ ये कुशलताएँ भी पाठ्यक्रम के समुचित लक्ष्यों का हिस्सा हैं।

शिक्षकों के अनुभव में हमारी परीक्षा प्रणाली में दो तरह के सुधारों की जरूरत थी–एक यह कि प्रश्नों की संख्या कम रहनी चाहिए ताकि जरूरत पड़ने पर किताब से पढ़कर उत्तर खोजने का समय ठीक से मिल सके–नहीं तो बच्चों को कई प्रश्न छोड़ देने पड़ते हैं। दूसरी तरफ, प्रश्नों के प्रकारों पर भी फिर से सोचने की जरूरत है क्योंकि अधिकांश बच्चे तर्क करने,तुलना करने, अनुमान लगाने, अपना मत देने, निष्कर्ष निकालने जैसे कार्यों की माँग करने वाले प्रश्नों का उत्तर लिखित रूप में देने के लिए सक्षम नहीं हैं।

एक बार हमने 300 बच्चों के द्वारा हर प्रकार के प्रश्न पर प्राप्त अंकों का विश्लेषण किया था। हमने पाया –

- किताब में किसी एक जगह पर साफ तौर पर दी गई जानकारी को खोजकर लिखने में 92 प्रतिशत बच्चे सफल हुए थे।
- तर्क, तुलना, कारण,सारांश की माँग करने वाले प्रश्नों में 43 प्रतिशत बच्चे मध्य और उच्च श्रेणी के अंक प्राप्त कर पाए।

- दी गई स्थिति के आधार पर आगे का अनुमान लगाने, या अपना मत व्यक्त करने की माँग करने वाले प्रश्नों में 38 प्रतिशत बच्चे मध्य व उच्च श्रेणी के अंक प्राप्त कर पाए।

शिक्षक और हम सोचते कि बच्चों को किस के अनुभव दिए जाएँ ताकि वे लिखित रूप में भी तर्क, तुलना अनुमान जैसे कार्यों को कर पाएँ। कक्षा की सामूहिक चर्चाओं में या छोटे समूह में हुए मौखिक अभ्यासों में, वे इन कार्यों में खूब भाग लेते थे। यानी उनकी बौद्धिक क्षमताओं की सीमा की बजाय हमें उनकी लेखन क्षमता की सीमा अधिक नजर आती थी। माध्यमिक स्कूल के 20 से 50 प्रतिशत बच्चे स्वतंत्र रूप से किताब पढ़कर समझने व अपने विचारों को स्वयं लिख पाने के स्तर पर नहीं होते थे,ऐसा हमारा अनुभव था। हालाँकि यह भी मानना पड़ेगा कि सामूहिक चर्चाओं में सभी बच्चे बराबरी से भाग नहीं लेते थे—दूसरी तरफ, परीक्षा की लिखित कॉपियों में प्रत्येक बच्चे की स्थिति हमारे सामने होती थी। बहरहाल, परीक्षा कॉपियों के अध्ययन से हमें व शिक्षकों को बच्चों को सिखाने व सभी को पूरे मौके देने की चुनौतियाँ साफ होती गई, जिनके लिए हम रास्ते निकालते रहे। जहाँ तक बच्चों के रिजल्ट का सवाल था,तो हम उन्हीं बातों का मूल्यांकन करने पर विश्वास करते थे जो बच्चों को हम सिखा पाए थे। इसलिए, जिन प्रश्नों को बहुत ही कम बच्चों ने ठीक किया होता था, उनके कुल अंकों को भी कम कर दिया जाता था तथा वे अंक ऐसे प्रश्नों को बाँट दिए जाते थे जिन्हें ज्यादा बच्चे ठीक से कर पाए थे। पाठ्यक्रम के उद्देश्य हासिल करने का दायित्व शिक्षक व पाठ्यक्रम निर्माताओं का पहले था—बच्चों का बाद में।

प्रयोग,नीतियाँ और उनके आगे

2005—06 में छात्रों के मूल्यांकन पर बुनियादी चिन्तन करते हुए एक नेशनल फोकस ग्रुप ने कई महत्वपूर्ण अनुशंसाएँ कीं। उसने लिखा कि जो सिखाया गया उसे कितना संचित किया गया—केवल इसे छात्रों का मूल्यांकन करने का ध्येय नहीं होना चाहिए। सिखाए गए के प्रति छात्र की प्रतिक्रिया को मूल्यांकन का केन्द्र बिन्दु बनाना जरूरी है। विस्तार से दिए गए अनेक प्रस्तावों में ओपन बुक परीक्षा पद्धति की ओर अन्ततः बढ़ना भी एक प्रमुख प्रस्ताव है। फोकस ग्रुप पेपर कहता है कि ओपन बुक परीक्षा पर एक पायलट प्रोग्राम किए जाने की आवश्यकता है।

इस सम्बन्ध में कई विकल्प अपनाए जा सकते हैं। एक बार कुछ शिक्षकों ने यह विकल्प सामने रखा – कि यूनिट टेस्ट में खुली पुस्तक प्रणाली अपनाई जाए तथा वार्षिक परीक्षा में बन्द—पुस्तक परीक्षा ही रहने दी जाए। यह विकल्प जन—सामान्य को ज्यादा आसानी से स्वीकार भी होगा। एक और विकल्प यह रखा गया कि वार्षिक परीक्षा के पेपर को दो भागों में लिया जाए—एक खुली पुस्तक से और दूसरा पुस्तक जमा करवा के, बन्द—पुस्तक विधि से। बहरहाल, हमारा अनुभव यह रहा कि अमूमन शिक्षक समाज विज्ञान के मूल्यांकन में खुली पुस्तक परीक्षा की उपयोगिता व महत्ता के प्रति प्रतिबद्ध हो जाते हैं। उनके अनुसार इससे शिक्षा व्यवस्था की कई बुराईयों पर काबू पाने में मदद मिल सकती है—इससे बच्चों में हौंसला व आत्मविश्वास बढ़ता है,परीक्षा का तनाव व भय बहुत कम हो जाता है,उनके द्वारा आजू—बाजू से नकल करने की कोशिश में गिरावट आती है,गाईड बुक व कुंजियों पर निर्भर रहने की प्रवृति मिटने लगती है।

इन सब उम्मीदों के तल में है यह उम्मीद कि शिक्षक नए विचारों की ओर प्रतिबद्ध हो सकेंगे। शिक्षकों के साथ मिलकर काम करने की लम्बी प्रक्रिया से गुजरते हुए हमें एकलव्य में इस उम्मीद को त्यागने का कोई कारण नहीं मिला है—बशर्ते नीति निमार्ण व शासन—प्रशासन की प्रक्रियाओं में धैर्य, स्वतंत्रता, विविधता में विश्वास करने का साहस हो।

(यह लेख एकलव्य के सामाजिक अध्ययन कार्यक्रम के अनुभवों पर आधारित है। इसे लिखने में सामाजिक अध्ययन कार्यक्रम टीम साथी संजय तिवारी ने मदद की है। —रश्मि पालीवाल)

सन्दर्भः

1. द स्कूल एण्ड सोसायटी, (पहली बार 1900 में प्रकाशित) आकार पब्लिसर्स ,2008, पेज 80—81
2. कमला वी. मुकुन्दा, व्हाट डिड यू आस्क एट स्कूल टूडे? 2009 कोलिन्स
3. राष्ट्रीय फोकस समूह का परीक्षा सुधार आधार पत्र, एनसीईआरटी 2006

रश्मि पालीवाल *की पृष्ठभूमि इतिहास की है। वे 1983 से एकलव्य के साथ सामाजिक विज्ञानों के नए पाठ्यक्रम विकसित करने का काम कर रही हैं। उन्होंने पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें विकसित करने में अनेक शासकीय और अशासकीय संस्थाओं के साथ काम किया है। इसके अलावा उन्होंने सामाजिक विज्ञान शिक्षण और पाठ्यक्रम विकास पर बहुत कुछ लिखा है। वर्तमान में वे कार्यक्षेत्र—आधारित ऐसे संसाधन केन्द्रों के विकास में संलग्न हैं जिनका प्राथमिक शिक्षा पर विशेष जोर है। उनसे इस subburashmi@yahoo.com ईमेल पते पर सम्पर्क किया जा सकता है।*